शोध विविधा

भाषा, साहित्य एवं मानविकी के पूर्व समीक्षित तथा संदर्भित गुणवत्तापूर्ण
शोधपत्रों का पुस्तक अध्याय के रूप में संकलन

संपादक

डॉ. राहुल शुक्ला

एम.ए., एम.फिल., पीएच.डी., नेट
विभागाध्यक्ष, हिन्दी-विभाग,
अभिनवप्रज्ञा स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
हरदौरपुर, चौडगरा, फतेहपुर (उ.प्र.)

संकल्प प्रकाशन

कानपुर (उ.प्र.)

31. हिन्दी के रेखाचित्र साहित्य में शम्भूनाथ सक्सेना के रेखाचित्रों की उपलब्धियाँ 154
डॉ. समीक्षा शुक्ला
32. आदिवासी समाज : स्वरूप संधान 158
डॉ. दीपक कुमार
33. लोकऋण : बिखरते मूल्यों का दस्तावेज 160
राकेश कुमार यादव
34. श्रीरामचरितमानस के संस्कार और वर्तमान युग 163
मालती मिश्रा
35. अमरकांत कृत उपन्यास 'इन्हीं हथियारों से' में गांधीवाद और समाजदर्शन 166
गौरव रस्तोगी
36. मनु शर्मा कृत 'कृष्ण की आत्मकथा' में अंधविश्वास विरोधी विचार 171
विद्या ए.पी.
37. अमरीक सिंह दीप कृत 'काली बिल्ली' कहानी की कथावस्तु 174
अनुराधा पाकलपाटि
38. शेखर जोशी की कहानियों में मनोवैज्ञानिक समस्याएँ 178
कोमती राम
39. परशुराम शुक्ल की कहानियों में बालजीवन 181
वी. पुष्कला
40. डॉ. कुँवर बेचैन के रचना–संसार में संवेदना एवं शिल्प 184
सईद अहमद सिद्दीकी
41. हिंदी उपन्यासों में चित्रित भारत–विभाजन की पीड़ा 188
जसराम
42. हिन्दी की दलित आत्मकथाओं में स्त्री–विमर्श 192
सवरिन डिसोजा
43. सुशीला टाकभौरे के 'संघर्ष' कहानी–संग्रह में चित्रित दलित नारी–जीवन का यथार्थ 197
विकास मच्छिद्र परदेशी
44. विष्णु नागर के निबंधों में सामाजिक व्यंग्य 202
पूजा भारद्वाज

कवि के संपूर्ण चिंतन का आधार अनुभव है और यही जीवन–अनुभव उसे कभी आत्मसंघर्ष की स्थिति में ले जाता है, कभी ऐसे रूप से भी परिचित करवाता है जिसमें वह अपनी पहचान करता है। वास्तव में यही आत्मविश्लेषण और साक्षात्कार है, जो कि मूल्यों का बहुत बड़ा आधार है। वैयक्तिक मूल्यों को अलग बताना बड़ी कठिन समस्या है, क्योंकि कवि जिस निजी धारणा अथवा मान्यता को इंगित करता है, वह सीमित और सूत्ररूप में प्रस्तुत होकर एकाएक व्यापक संदर्भ ग्रहण कर लेती है। इस प्रकार उनकी वैयक्तिक मूल्य–चेतना, सामाजिक मूल्य–चेतना का व्यापक अर्थ ग्रहण किये हुये हैं।

'ब्रह्मराक्षस' कविता में कवि वैयक्तिक मूल्य के रूप को स्पष्ट करता है, जिसमें विशेष रूप से दो शक्तियां काम कर रही हैं– एक सदवृत्ति से युक्त नैतिक आचरण की मूल्यदृष्टि तथा दूसरी स्वार्थवृत्ति वाली दृष्टि। मुक्तिबोध की कविता समग्र रूप में मध्यवर्गीय बुद्धिजीवी की छटपटाहट की कविता है, जिसमें कवि निरंतर अपनी पहचान करना चाहता है। आत्म–परिचय से जग–परिचय संभव है। इसलिए इस कविता के अंत में वह जहां एक ओर अंतर्विरोध, मानसिक विकलता की बात करते हैं, वहीं दूसरी ओर आंतरिकता के मूल्य का भी संकेत कर देते है। जैसे –

"आत्मचेतस किंतु इस। व्यक्तित्व में थी प्राणमय,
अनबन...। विश्वचेतस बे–बनाव।। महत्ता के चरण में था।
विषादावूल मना। मेरा उसी से उन दिनों होता मिलन
यदि। तो व्यथा उसकी स्वयं जीकर। बताता मैं उसे उसका
स्वयं का मूल्य। उसकी महत्ता। वह उस महत्ता का
हम सदियों के लिए उपयोग। उस आन्तरिकता का बताता मै महत्व" [3]

उनके सामने कोई एक व्यापक लक्ष्य नहीं है। ऐसे लोगों पर वह जहां करारा प्रहार करते हैं, वहां समाज में उत्तरोत्तर मूल्यहीनता की स्थिति का उल्लेख भी करते हैं। वस्तुतः समाज में कुछ ऐसे भी लोग होते हैं जो कवि की तरह सिर्फ अपने लिए ही नहीं जीते, उनके जीने में जीवन के प्रति थोड़ी सार्थकता, लक्ष्य तथा आदर्श रहता है। यही कारण है कि ऐसे लोगों को स्वार्थी लोग जब समाप्त कर देते हैं, तब कवि को लगता है कि एक पूरा युग समाप्त हो गया है। ऐसा मूल्य–संकल्पित व्यक्ति भले ही–

"मारा गया वह बधिकों के हाथों। मुक्ति का इच्छुक वृषार्त अन्तर।
मुक्ति के यत्नों के साथ निरंतर। सबका था प्यारा।
अपने में द्युतिमान। उसका यों वध हुआ। मर गया एक युग" [4]

ऐसा युगपुरुष जो जीवन आदर्श के प्रति समर्पित व्यक्ति है, को मुक्तिबोध ने चेतनापुरुष का नाम दिया है। कवि इस समाज की मूल्यहीनता में अपने आपको कई बार एडजस्ट करने में असमर्थ पाता है। कवि को लगता है कि सारा समाज एक ऐसे मूल्यहीन मार्ग की ओर जा रहा है, जहां वह अपने को अकेला पाता है, परंतु ऐसे सामाजिक भटकाव में भी वह अपने आपसे छल नहीं करता, अपने आपको धोखा नहीं देता। जीवन के छोटे–छोटे लालच उसके मार्ग में बाधा नहीं डाल सकते। तभी तो वह कहता है–

"कविता में कहने की आदत नहीं, पर कह दूं।
वर्तमान समाज में चल नहीं सकता। पूंजी से जुड़ा हुआ

अपने आपको इस कहानी से जोड़ते हुए अपनी घर की नौकरानी पुष्पा की बेटी अंजू (काली बिल्ली) के माध्यम से यह दर्शाता है कि गरीब लोग हालात के हाथों मजबूर हैं। ''मलिन बस्तियाँ, जिसमें दुनिया भर की सारी गंदगी, भूख, बेकारी, बीमारी, लाचारी, गुंडई–लफंगई, लौंडियाबाजी, लौंडेबाजी, दारूबाजी, जुंएबाजी... ऐसी कौन–सी बुराई हैं जो नहीं है वहाँ। बस्ती के बच्चे सरकारी स्कूल में मिडडे मील के लालच में कक्षा पांच तक ही किसी तरह पढ़ पाते हैं। पढ़ाई छूटते ही जरा बड़े होने पर कुछ लड़के छोटे–मोटे काम–धंधों पर लग जाते हैं, लड़कियां बंगलों में चौका बर्तन का काम करने लगती हैं और बाकी बचे लड़के शराब, जुए व लौंडियाबाजी में रम जाते हैं।''[3]

इस कहानी के माध्यम से लेखक प्रसार माध्यमों पर भी तीखा वार करता है। इन प्रसार माध्यमों के कारण बढ़ते शोषण व अत्याचार पर प्रकाश डाला है। ''तिस पर गुड़ का बाप कोल्हू है यह टेलीविजन... इस ससुरे के नंगनाच ने पूरी बस्ती को मुहल्ला मुहब्बत वाला बना डाला है। कल हमारे मुहल्ले का एक किशोर लड़का आठ साल की मासूम बच्ची से मुंह काला करने जा ही रहा था कि बंगले पर काम करने गई लड़की की मां घर लौट आई नहीं तो अनर्थ ही हो गया होता।''[4]

इस कहानी में प्रेम को परिभाषित करता हुआ लेखक अपने समय के प्रेम और आज की युवापीढ़ी प्रेम के अंतर को कुछ इस तरह दर्शाता है– ''तस्वीर को देख मैं गहरे पशोपेश में डूब गया था... क्या यह प्रेम है? मैं दिग्भ्रमित–सा हो गया था। प्रेम मैंने भी किया था। उसमें यूं डूबकर जिया था जैसे कोई गोताखोर समुद्र में उतरने के बाद बाहर निकलना भूल जाए। परंतु अपने प्रेम का मैंने कभी इस तरह सार्वजनिक प्रदर्शन नहीं किया था। मुझे अपने प्रिय का अहित और उसकी बदनामी कतई पसंद नहीं थी। अगरबत्ती की तरह धीरे–धीरे चुपचाप जलते हुए राख हो जाना और अपने पीछे भीनी–भीनी सुगंध छोड़ जाना मेरी नजर में प्रेम यही था। लेकिन यह तस्वीर.... .यूं लग रहा था जैसे दो जलते हुए जिस्म पिघलकर एक दूसरे में समा जाने को आतुर हों।''[5]

आज की युवापीढ़ी में न आगे–पीछे की सोच है न परिणाम की फिक्र है। इस पर लेखक ने व्यंग्य किया है। ''बाद में पता चला था कि मेरे अंजू के घर से लौटने के दो दिन बाद अंजू मौका मिलते ही जीवन के साथ घर से भाग निकली थी। उसके पापा और बड़े भाई दिन भर की गर्दिश भरी भागदौड़ के बाद बड़ी मुश्किल से उसे जतिन के एक दोस्त के घर से बरामद करवा लाए थे। अगले दिन सुखदेव कर्ज काढ़ कर अपने पूरे परिवार को लेकर गांव चला गया और चौदह वर्षीय अंजू का गौना निपटाकर ही वापस लौटा था।''[6]

अमरीक सिंह दीप जी ने इस कहानी के माध्यम से यह स्पष्ट किया है कि गरीबी के कारण जूझते हुये स्त्री–जीवन, आधुनिक समाज होने के बावजूद भी निम्नवर्गीय जीवन में पीड़ा, निराशा, यह सब परिस्थितियां स्त्री के जीवन को और जटिल बना देती हैं। कहानीकार इस कहानी के माध्यम से गरीबी, स्त्री–शिक्षा, बेरोजगारी की वजह से ग्रामीण लोगों का नगर की ओर पलायन, विद्रोह, बालविवाह से उत्पन्न परिस्थितियां, अत्याचार जैसे सामाजिक पहलुओं को एक दूसरे से जोड़ा है।

अमरीक सिंह दीप जी ने काली बिल्ली कहानी के माध्यम से कुछ मलिन बस्तियों को कुछ इस तरह प्रस्तुत किया है। ''चीरहरण भैया जी, हमारे मुहल्ले के बारे में इलाके की पुलिस का क्या कहना है, जानते हैं? यह रंजीतपुरवा नहीं छिनारपुरवा है। हमारे मुहल्ले की हर जवान हो रही लड़की की हालत चील के घोसले में मांस जैसी है। हमारे पड़ोस में एक विधवा औरत तीन जवान बेटियों के साथ रहती है। एक रात कोई शोहदा उसके घर के दरवाजे पर एक कागज चिपका गया... यहां माल मिलता है– बड़ी पचास रुपये में और छोटी सौ रुपये में और सुनेंगे।''[7]

हमारे देश में कुछ गरीब बेटियों के पिता की बेबसी इतनी बढ़ गई है कि न चाहते हुए भी बेटियों का बाल विवाह करने पर मजबूर हैं। ''वे देश के कानून को शिरोधार्य कर बेटी की अट्ठारह वर्ष की आयु होने तक इन बूचड़खाने जैसी बस्तियों में बेटियों को बचाते रहें। अपनी इज्जत–आबरू को भूलकर रेत में सिर गाड़ लें? या फिर पांडवों की तरह बेटियों का चीरहरण होते देखते रहें? या फिर देश के कानून को ताक पर रखकर कम उम्र में उनके विवाह कर अपनी इज्जत आबरू की रक्षा करें।''[8]

अमरीक सिंह दीप जी ने इस कहानी में सरकार द्वारा अपनाई गई उदारीकरण की नीति के सच को कुछ इस तरह प्रस्तुत किया है। ''सच तो यह है कि इस देश में आए उदारीकरण ने गरीब आदमी से उसका रोजगार छीनकर उसके पेट पर लात ही नहीं मारी, बल्कि शिक्षा और स्वास्थ्य जैसी जनसुविधाओं का बाजारीकरण कर गरीब आदमी के बच्चों का भविष्य भी खा लिया है। गरीब आदमी न घर का रहा और न घाट का।''[9]

''अंजू का पापा सुखदेव वर्षों से एक बल्ब फैक्ट्री में बल्ब बनाने का काम करता है। जब से शहर में बिजली की कटौती शुरू हुई है तब से दोपहर बाद कहीं जाकर बल्ब का काम शुरू हो पाता है। दोपहर बाद से रात आठ बजे तक ठेकेदारी के अंतर्गत वह मुश्किल से तीस–चालीस रुपये का काम कर पाता है। भूमंडलीकरण के चलते चीन से आने वाली बिजली की सस्ती झालरों ने शहर की छोटी बल्ब बनाने वाली फैक्ट्रियों को बंदी के कगार पर ला खड़ा किया है। इधर अंजू की मम्मी पुष्पा रोज सुबह शाम पांच–छह घरों के जूठे बर्तन मांज कर भी हजार रुपये से ऊपर नहीं कमा पाती। ऐसे में नंगी नहाए क्या और निचोड़े क्या?''[10] यह सब गरीब बस्तियों का कड़वा सच है। पत्र–पत्रिकाओं में दिए गए विज्ञापन जैसे– बाल विवाह कानूनन जुर्म है, इसमें भागीदार होकर अपराधी न बनें। बेटियों का कल बचाएं। क्या यह सब विज्ञापन–नारे बेटियों को बचा पाएंगे? बालविवाह पर कानून बना देने से यह प्रथा खत्म नहीं होगी। जरूरत है स्त्री–शिक्षा और गरीबों की गरीबी दूर करने की।

अमरीक सिंह दीप की 'काली बिल्ली' कहानी की भाषा एकदम बहते पानी जैसी है। जिस वर्ग की कहानी है, उसी वर्ग की भाषा भी है। लेखक ने इस कहानी को कुछ–कुछ फ्लैशबैक शैली में प्रस्तुत किया है। इस शैली में पाठक की रोचकता और उत्सुकता बनी रहती है। अमरीक सिंह दीप जी ने इस कहानी में संदर्भानुसार कहावतों का प्रयोग करके भाषा के सौंदर्य को बढ़ाया है। अमरीक सिंह दीप की 'काली बिल्ली' कहानी में कहावतें कुछ इसतरह प्रस्तुत की गयी हैं–

''जिसके जहां सींक समाए।''[11]

''मरी आहत आत्मा कराह उठी।''[12]

''अगरबत्ती की तरह धीरे–धीरे चुपचाप जलते हुए राख हो जाना और अपने पीछे भीनी–भीनी सुगंध छोड़ जाना।''[13]

अमरीक सिंह जी की इस कहानी में वर्णनात्मक शैली का प्रयोग हुआ है। उदाहरण के लिए– ''काली बिल्ली रसोई घर की चौखट से सटकर खड़ी रसोई घर के अंदर झांक रही है। जैसे किसी शिकार की तलाश में हो। पत्नी उसे दुरदुरा रही है। लेकिन वह बेशर्मी से हंसे जा रही है– बेहद शातिर किस्म की ढीठ हंसी। जब वह हंसती है तो उसके दांतों की सफेद दमकती लड़ियों से हंसी आतशी अनार की तरह झरती है। उसकी बड़ी–बड़ी बातूनी आंखें नक्षत्रों की तरह चमकने लगती हैं। और एक सम्मोहन रच डालती हैं। इस जादुई सम्मोहन से बचने का बूता बहने में भी नहीं है।''[14]

प्रस्तुत कहानी में गालीगलौज का प्रयोग संदर्भानुसार हुआ है। उदाहरण के तौर पर– ''हरामजादी कुतिया ! मेरे खानदान की इज्जत मिट्टी में मिलाकर अब मक्कर काट रही है। आज मैं तुझे जिंदा नहीं छोडूंगा। काटकर फेंक दूंगा।''[15]

इस कहानी में संदर्भानुसार वर्णनात्मक, प्रश्नोत्तरी, संवादात्मक, शैलियों का प्रसंगानुसार प्रयोग हुआ है जिससे कहानी में लचीलापन आ गया है।

बहुमुखी प्रतिभाशाली कहानीकार अमरीक सिंह दीप ने 'काली बिल्ली' कहानी में समाज में विघटित और क्षरित होते हुए जीवन–मूल्यों, स्थितिगत अंतर्विरोधों और वस्तुतः आर्थिक संकट, फैक्ट्रियों में काम करने वाले मजदूरों, घरों में झाड़ू–पोछा–बर्तन मांझने वाली स्त्रियों, गरीबी में दबती हुई बेटियों की दयनीय स्थिति को सामाजिक संदर्भ में पकड़ने की कोशिश की है। गरीबी, प्रेम, स्त्रीशिक्षा, विद्रोह, अनमेल विवाह, बालविवाह, निम्नवर्गीय लोगों की मजबूरी आदि को पाठक के सामने रखा है। उदारीकरण से बढ़ती हुई गरीबी, बेरोजगारी, काम की तलाश में निकले ग्रामीण लोग, बढ़ती महंगाई के कारण बढ़ती मलिन बस्तियां, इन मलिन बस्तियों में स्त्रियों पर बढती शोषण, अत्याचार जैसे सामाजिक रूढ़ियों को बहुत ही खूबी से प्रस्तुत किया गया है। लेखक इन रूढ़ियों का निस्सहाय चश्मदीद गवाह बनकर रह गया है। लेखक ने अंदर के आक्रोश को कुछ इस तरह प्रस्तुत किया है– ''काली बिल्ली के साथ जो हो रहा है या हो चुका है, उसका चश्मदीद गवाह हूं। उसकी जिंदगी के साथ खिलवाड़ हो रहे हैं, मूकदर्शक बना मैं उसका तमाशा देख रहा हूँ। क्यों कुछ कर नहीं रहा? अंतर्मन कराह उठा... क्या कर सकते हो तुम? क्या है तुम्हारे हाथ में तुम कोई सरकार या न्यायपालिका नहीं हो। महज एक अदने से संवेदनशील लेखक हो। कलम के अतिरिक्त कोई दूसरा हथियार नहीं है तुम्हारे पास। इसी के बल पर जो कुछ करना हो, कर सकते हो तुम। लेकिन इस हथियार की औकात सरकार ने अपने कारखानों और पूंजीपतियों को उतारकर खाली म्यान भर की रहने दी है। खाली म्यान से न कोई युद्ध जीता जा सका है और न कोई क्रांति संभव हुई है।''[16]

संदर्भ :

1. अमरीक सिंह दीप : काली बिल्ली, आत्मकथ्य, पृ. VIII
2. वही, पृ. IX
3. अमरीक सिंह दीप : काली बिल्ली, पृ. 15
4. वही, पृ. 20
5. वही, पृ. 22
6. वही, पृ. 22
7. वही, पृ. 27
8. वही, पृ. 27
9. वही, पृ. 22
10. वही, पृ. 9
11. वही, पृ. 23
12. वही, पृ. 27
13. वही, पृ. 15
14. वही, पृ. 15
15. वही, पृ. 25
16. वही, पृ. 18

शोधार्थी (हिन्दी)
उच्चशिक्षा शोध संस्थान,
दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, मद्रास,
चेन्नई (तमिलनाडु)
दूरभाष : 07299012063